अंजना वर्मा (2026). चोलयुगीन मुद्राओं का सामाजिक एवं आर्थिक प्रभाव. International Journal of Multidisciplinary Research & Reviews, 5(9), 182-185.

INTERNATIONAL JOURNAL OF
MULTIDISCIPLINARY RESEARCH & REVIEWS
journal homepage: www.ijmrr.online/index.php/home

चोलयुगीन मुद्राओं का सामाजिक एवं आर्थिक प्रभाव

डॉ० अंजना वर्मा

असि० प्रोफेसर, इतिहास विभाग, म०गां० काशी विद्यापीठ, वाराणसी, भारत.

How to Cite the Article: अंजना वर्मा (2026). चोलयुगीन मुद्राओं का सामाजिक एवं आर्थिक प्रभाव. International Journal of Multidisciplinary Research & Reviews, 5(9), 182-185.

https://doi.org/10.56815/ijmrr.v5i9.2026.182-185

दशवीं शती के प्रारंभिक वर्षों में प्रायद्वीपीय सुदूर दक्षिण भारत में कई शक्तिशाली एवं महत्त्वपूर्ण शक्तियों का उदय हुआ। यह राजवंश अपनी सामरिक एवं सांस्कृतिक उपलब्धियों के कारण विशेष रूप से महत्त्वपूर्ण है। यह राज्य पेन्नार व वेल्लारू नदियों के मध्य स्थित था। यह क्षेत्र पूर्वी समुद्र तट से जुड़ा हुआ था। कावेरीपट्टनम्, उरगपुर, तंजुवुर, काच्ची, गंगैकोडचोलपुरम् आदि नगर विशेष रूप से उल्लेखनीय व क्रमशः चोलों की राजधानी थे।[1] चोल साम्राज्य अपनी उत्कृष्ट प्रशासनिक व्यवस्था, नौसैनिक शक्ति, सुदृढ़ अर्थव्यवस्था एवं मंदिर स्थापत्य के लिए प्रसिद्ध है। चोल शासकों ने स्वर्ण, रजत व ताम्र धातुओं की मुद्राओं का प्रचलन किया, जिसने वस्तु विनिमय की प्रणाली को मौद्रिक अर्थव्यवस्था में परिवर्तित करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभायी। राजराज प्रथम एवं राजेन्द्र प्रथम की अनेक महत्त्वपूर्ण विजयों के कारण चोल युग में मौद्रिक अर्थव्यवस्था का विशेष रूप से विकास हुआ। चोल युगीन मुद्राएं न केवल राजकीय कर संग्रह का साधन थी अपितु मंदिरों, स्थानीय संस्थाओं और बाह्य देशों में व्यापार करने वाले श्रेणियों के मध्य वित्तीय लेन-देन का प्रमुख माध्यम थी।

चोल शासकों ने स्वर्ण, रजत एवं ताम्र धातुएँ की मुद्राएँ प्रचलित किये। इन मुद्राओं का वजन एवं शुद्धता अत्यंत सटीक होती थी, जो तद्युगीन वित्तीय स्थिरता और धातु विज्ञान की उन्नत समझ का प्रमाण है। 'कलुजु', स्वर्ण धातुका प्रमुख मानक सिक्का था।[2] 'माडै' उच्च वर्ग की स्वर्ण मुद्रा थी। यह सिक्का बड़े पैमाने पर भूमि क्रय-विक्रय, अंतरराष्ट्रीय व्यापार, विशेष राजकीय अवसरों एवं मंदिरों में स्थायी अक्षय निधि हेतु प्रयोग में आते थे। राजेन्द्र चोल ने गंगैकोंडचोलपुरम् माडै निर्गत किया था। 'कासु' नामक मुद्रा स्वर्ण, चाँदी व ताम्र धातु से निर्मित थी। यह सामान्य जन में सबसे अधिक प्रचलित मुद्रा थी।[3] इसके अतिरिक्त 'पोन' स्वर्ण धातु का तथा 'अक्कम' ताम्र धातु की मुद्रा थी। पोन व्यापारिक श्रेणियों के मध्य वित्तीय लेन-देन में तथा अक्कम दैनिक आवश्यकताओं को पूर्ण करने में प्रयोग किया जाता था। इन मुद्राओं के मुख भाग पर चोलों के राजकीय चिन्ह व्याघ्र का अंकन होता था[4] तथा दूसरी तरफ बैठी हुयी आकृति के साथ राजा का नाम एवं उपाधियाँ होती थी।[5] कतिपय मुद्राओं

The work is licensed under a Creative Commons Attribution Non Commercia 4.0 International License

अंजना वर्मा (2026). चोलयुगीन मुद्राओं का सामाजिक एवं आर्थिक प्रभाव. International Journal of Multidisciplinary Research & Reviews, 5(9), 182-185.

पर चेर साम्राज्य का प्रतीक धनुष व पाड्य साम्राज्य का प्रतीक मत्स्य का भी अंकन किया जाता था। इस प्रकार का अंकन राजकीय संप्रभुता को दर्शाता है। इन मुद्राओं की शुद्धता का भी विशेष ध्यान रखा जाता था, जिससे राजकीय टंकशालाओं पर कड़े नियंत्रण के प्रमाण प्राप्त होते है।

मुद्रा प्रणाली के प्रसार का प्रभाव केवल व्यापार तक सीमित नहीं रहा अपितु इसने तद्युगीन समाज की सामाजिक स्थिति को भी प्रभावित किया। चोल काल में मंदिर केवल उपासना के स्थल नहीं थे अपितु ये सामाजिक-आर्थिक गतिविधियों के केन्द्र भी होते थे। ये शिक्षा, औषधालय, ललित कलाओं आदि के केन्द्र के रूप में प्रख्यात थे।[6] अभिलेखों के अनुसार मंदिरों में अनेक देवदासियों, संगीतकार, माला बनाने वाले, शिल्पी आदि कार्यरत थे। इन सभी को इनकी सेवाओं के बदले नकद वेतन दिया जाता था।[7] जिससेएक नवीन शहरी मध्यम वर्ग अस्तित्व में आया। इस वर्ग ने सामाजिक गतिशीलता को बढ़ावा दिया और सामंतवाद के प्रभाव को शिथिल किया।

चोल कालीन समाज में वलंगै (दक्षिण-हस्त वर्ग) और इडंगै (वाम-हस्त वर्ग) के अस्तित्व की सूचना प्राप्त होती है। मौद्रिक संसाधनों पर इडंगै का अधिकार था जिसने दोनों वर्गों के मध्य संघर्ष को प्रारंभ किया। अतः सिक्कों के प्रसार ने सामाजिक पदानुक्रम को कमजोर कर दिया।

चोल अभिलेखों में महिलाओं के द्वारा दान किये जाने का उल्लेख प्राप्त होता है, जो महिलाओं की वित्तीय स्वतंत्रता का प्रमाण प्रस्तुत करती है। राजराज प्रथम की बहन, राजेन्द्र प्रथम पत्नियों एवं अनेक चोल रानियों के स्वयं का कोष होता था, जिसका वे स्वतंत्र रूप से प्रयोग करती थी। रानियों के अतिरिक्त साधारण कार्यों में संलग्न महिलाओं, देवदासियों, कृषक महिलाओं आदि के भी द्वारा दान किये जाने के अनेक साक्ष्य प्राप्त होते हैं। चोल अभिलेख में उल्लिखित है कि एक साधारण महिला ने एक मंदिर को 30 कासु दान किये जिससे मंदिर में उसके नाम में अखंड दीप जलाया जा सके। इस प्रकार स्पष्ट है कि चोल कालीन महिलाओं के पास न केवल निजी सम्पत्ति थी अपितु वे मौद्रिक लेन-देन में भी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती थी।

चोल युगीन मुद्राओं ने तत्कालीन आर्थिक ढ़ांचे को भी परिवर्तित किया। इस समय ग्राम्य स्तर पर धान मूल्य के मापन एवं विनिमय का महत्त्वपूर्ण साधन बना रहा[8] किन्तु मुद्रा के आगमन ने ग्रामीण बाजारों के दृश्य को परिवर्तित किया। मुद्रा के आगमन के पूर्व जहाँ किसान को अपने कृषि उत्पादन का एक हिस्सा देना पड़ता था, वहीं सिक्कों के आगमन ने विनिमय को सरल और सुगम बना दिया।[9] अब किसान अपने उत्पादन को बाजार में बेचकर नकद सिक्काप्राप्त कर सकता था। साथ ही इन्हीं नकद सिक्कों के माध्यम से वह कर का भुगतान कर सकते थे।

चोल शासकों ने भूमि कर निर्धारण की एक अत्यंत वैज्ञानिक प्रणाली विकसित की। चोल शासक राजराज प्रथम एवं कुलोत्तुंग प्रथम ने अपने विशाल साम्राज्य की भूमि की पैमाइश एवं सर्वेक्षण कराकर एक स्वस्थ स्वायत्तशासी लोक प्रशासन को प्रोत्साहित किया।[10] शासक के इस कार्य से करों का निर्धारण उचित रूप से किया गया। सामान्यतः करों का निर्धारण अनाज और नकद दोनों रूपों में होता था किन्तु तटीय क्षेत्रों एवं व्यापारिक केन्द्रों में नकद रूप में वसूली की जाती थी। इससे बाजार व्यवस्था प्रणाली में वित्तीय तरलता आयी। फलस्वरूप व्यापार-वाणिज्य एवं साम्राज्य की अर्थव्यवस्था में चरमोत्कर्ष के प्रमाण

The work is licensed under a Creative Commons Attribution Non Commercia 4.0 International License

अंजना वर्मा (2026). चोलयुगीन मुद्राओं का सामाजिक एवं आर्थिक प्रभाव. International Journal of Multidisciplinary Research & Reviews, 5(9), 182-185.

प्राप्त होते हैं।

चोल युगीन शासकों ने अपनी सुदृढ़ नौसैनिक शक्ति के बल पर दक्षिण पूर्व एशिया, श्रीलंका व चीन के साथ अपने व्यापारिक संबंध स्थापित किये। अनेक बंदरगाहों से चोल व अन्य देशों की मुद्राएँ एक साथ प्राप्त होना प्रमाणित करता है कि यह क्षेत्र एक महत्त्वपूर्ण व्यापारिक केन्द्र था। मणिग्रामम, अजुवन्नम् जैसे विशाल व्यापारिक संघों (श्रेणियों) ने श्रीलंका, दक्षिण पूर्व एशिया व चीन तक व्यापारिक गतिविधियों का संचालन करते थे।[11] ये व्यापारिक श्रेणियाँ नकद ऋण देने, आयात-निर्यात शुल्क का भुगतान आदि कार्यों को सुचारू रूप से करते थे। चोल मुद्राएँ अपनी उच्च गुणवत्ता के कारण हिंद महासागर के व्यापारिक मार्गों पर एक 'ग्लोबल करेंसी' बन गयी थी। मुद्रा के व्यापक प्रचलन के परिणामस्वरूप तंजावुर, कावेरीपट्टनम्, गंगैकोडचोलपुरम् जैसे अनेक नगरों का विकास हुआ।[12] यहाँ नगरम् नामक व्यापारिक संघ विभिन्न व्यापारिक वर्गों,प्रतिष्ठानों, उद्योगों पर कर की दरों का निर्धारण तथा वसूली का कार्य करता था। यहाँ तक कि व्यापारिक हितों में ये विदेशों की यात्रा भी करते थे।

चोल युगीन अर्थव्यवस्था की सबसे मुख्य विशेषता मंदिरों का बैंक के रूप में कार्य करना था। चोल राजाओं, रानियों और धनी व्यापारियों द्वारा मंदिरों को बड़ी संख्या में स्वर्ण व ताम्र मुद्राएँ दान की जाती थी। जिनकों मंदिर प्रशासन उत्पादक कार्यों में लगाता था। तंजौर के बृहदेश्वर मंदिर में अभिलिखित है कि मंदिर इस पूंजी का उपयोग ऋण देने, कृषि भूमि के विकास, कारीगरों व पुजारियों के वेतन भुगतान आदि में किया जाता था। ऋण से प्राप्त ब्याज का उपयोग मंदिरों के दैनिक अनुष्ठानों, उत्सवों व दीप जलाने हेतु घी खरीदने आदि में किया जाता था।[13] इस प्रकार स्पष्ट है कि मंदिर वित्तीय संस्था के रूप में कार्य करते थे जिससे धर्म व अर्थव्यवस्था के मध्य अन्तर्सबंध स्थापित हुआ।

चोल युगीन मुद्राएँ उत्कृष्ट धातु विज्ञान एवं कलात्मक चेतना को स्पष्ट करती है। चोलों ने मुद्रा ढ़ालने की ऐसी तकनीकी प्रयुक्त की जिससे सूक्ष्म विवरणों का भी अंकन किया जा सकता था। चोल मुद्राएँ साम्राज्यवादी गौरव को भी दर्शाती है। जैसे राजेन्द्र प्रथम ने उत्तर भारत की विजय के पश्चात् वहाँ से गंगा जल लाने की स्मृति में 'गंगैकोंडचोल' की उपाधि धारण की एवं मुद्राओं पर गंगावतरण के प्रतीकों को ढाला गया।[14] मुद्राओं की निर्माण तकनीकी शिल्पियों की उच्च व्यावसायिक दक्षता को प्रदर्शित करता है। शिल्पियों में यह दक्षता राज्य द्वारा विशेष संरक्षण प्राप्त होने के कारण ही संभव हो सकी थी।

अतः चोल युगीन मुद्रा प्रणाली के अध्ययन से स्पष्ट है कि मुद्राएँ केवल आर्थिक विनिमय का साधन नहीं अपितु सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक संबंधों को प्रतिबिंबित करने का बहुआयामी स्रोत है। चोलों की मौद्रिक नीति ने दक्षिणभारत की सामंती जड़ता को समाप्त किया जिसमें व्यापार सीमित वस्तु विनिमय पर सिमटा हुआ था। सामाजिक रूप से इन मुद्राओं ने पारंपरिक जातिगत बंधनों को शिथिल किया, जिससे सामाजिक गतिशीलता आयी, महिलाओं को वित्तीय स्वतंत्रता प्राप्त हुयी तथा एक नवीन वेतन भोगी मध्यम वर्ग अस्तित्व में आया। आर्थिक रूप से चोल मुद्राओं ने व्यापारिक श्रेणियों को विदेशों में निवेश करने, अन्तर्राष्ट्रीय वाणिज्यिक संबंधों को सुदृढ़ करने, कराधान प्रणाली को व्यवस्थित करने, नगरीकरण को गति देने एवं मंदिरों को समाज के वित्तीय व विकास बैंक के रूप में स्थापित करने का मार्ग प्रशस्त किया। अतः चोल साम्राज्य के दौरान

The work is licensed under a Creative Commons Attribution Non Commercia 4.0 International License

अंजना वर्मा (2026). चोलयुगीन मुद्राओं का सामाजिक एवं आर्थिक प्रभाव. International Journal of Multidisciplinary Research & Reviews, 5(9), 182-185.

अपनायी गयी विमुद्रीकरण की प्रणाली एक वित्तीय सुधार नहीं अपितु एक बृहद सामाजिक-आर्थिक आंदोलन था जिसने सामाजिक व आर्थिक एकीकरण में महत्त्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन किया।

AUTHOR(S) CONTRIBUTION

The writers affirm that they have no connections to, or engagement with, any group or body that provides financial or non-financial assistance for the topics or resources covered in this manuscript.

CONFLICTS OF INTEREST

The authors declared no potential conflicts of interest with respect to the research, authorship, and/or publication of this article.

PLAGIARISM POLICY

All authors declare that any kind of violation of plagiarism, copyright and ethical matters will take care by all authors. Journal and editors are not liable for aforesaid matters.

SOURCES OF FUNDING

The authors received no financial aid to support for the research.

REFERENCES (सन्दर्भ सूची)

1. पाठक, विशुद्धानंद (2008), दक्षिण भारतीय संस्कृति, लखनऊ, पृ०सं० 172

2. शास्त्री, के०ए० नीलकंठ (1974), द चोलाज, मद्रास, पृ०सं० 612-615

3. चट्टोपाध्याय, बी०डी० (1977), कॉइनेज एण्ड इकोनॉमी ऑफ साउथ इंडिया, नई दिल्ली, पृ०सं० 84-89

4.पाठक, विशुद्धानंद, पूर्वोक्त, पृ० 172

5. गुप्ता, पी०एल० (1969), कॉइन्स, नई दिल्ली, पृ०सं० 135-138

6. राव, सी०अन्ना (1998), एडमिनिस्ट्रेशन ऑफ टेम्पल्स, तिरूपति, पृ०सं० 34-377. शास्त्री, के०ए० नीलकंठ, पूर्वोक्त, पृ०सं० 452

8. पाठक, विशुद्धानंद, पूर्वोक्त, पृ०सं० 426

9. चम्पकलक्ष्मी, आर0 (1999), ट्रेड, आइडियोलॉजी एंड अर्बनाइजेशन साउथ इंडिया 300 बी०सी०टू 1300 ए०डी०), पृ०सं० 220-235

10. वही, पृ०स० 427

11. वहीं, पृ०सं० 431-432

12. पाठक, विशुद्धानंद (2008), दक्षिण भारतीय संस्कृति, लखनऊ, पृ०सं० 170-172

13. शास्त्री, के०ए०, नीलकंठ, पूर्वोक्त, पृ०सं० 440-445

14. देशीकचारी, टी० (1933), साउथ इंडियन कॉइन्स, मद्रास, पृ०सं० 72

The work is licensed under a Creative Commons Attribution Non Commercia 4.0 International License